Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 GISRRJ | Volume 2 | Issue 4 | ISSN : 2582-0095

वैदिक वाङ्मय एक चिन्तन

मधु शुक्ला
संस्कृत विभाग
इलाहाबाद विश्वद्यालय, प्रयागराज

शोध आलेख सार– नित्य यज्ञ के विधि विधान को आश्रम में निवास करने वाले समस्त जन समुदाय को सम्मिलित होकर सहयोग करना अपेक्षित था | जिसके फल स्वरूप समस्त समाज में सुख समृद्धि के साथ – साथ शांति व आत्मनिर्भरता सामान्यतः दृष्टिगोचर होती थी |

मुख्य शब्द– आर्ष ,साहित्य, ,वैदिक, वाङ्गमय, दीक्षा, निमित्त, सनातन, काल, पारिवारिक, संस्कार, सात्विक, आहार, सदाचार, ब्रह्मचर्य|

आर्ष साहित्य की स्थिति में वैदिक वाङ्गमय की शिक्षा – दीक्षा के निमित्त सनातन काल से प्रायः पारिवारिक संस्कार जिसमें सात्विक आहार, सदाचार व ब्रह्मचर्य अनुपालन के साथ शुद्धता व पवित्रता पर विशेष बल दिया जाता था | तभी मंत्रद्रष्टा ऋषियों को समालंकृत किया गया- "ऋषयोमंत्रद्रष्टार:"| जहाँ तक वैदिक संहिता ग्रन्थ के मौलिक चिंतन के परिप्रेक्ष्य में यदि विचार किया जाये तो "वेद" शब्द का व्युत्पत्तिपरक परिचयात्मक स्वरूप नितांत अपेक्षित है |

"वेद" शब्द 4 धातुओ से निष्पन्न माना गया है:- विद्ज्ञाने, विद्विचारणे, विद्लाभे और विद्सत्तायाम् |

यहाँ पर विद्ज्ञाने के भाव को ग्रहण करना समीचीन है| वैसे तो चराचर जगत में प्रत्यक्ष व परोक्षज्ञान की अनंत राशि समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त है जिसे संहिताग्रंथो के रूप में चारो वेदों में सूत्रात्मक रूप से समाविष्ट किया गया है | जिसके सम्यक अध्ययन हेतु वेदांग साहित्य का आद्योपांत पठन-पाठन परमावश्यक है | प्राचीन परम्परा के अंतर्गत सामान्यतः ब्रह्मचर्याश्रम में आठवें वर्ष बालक का विधिवत् यज्ञोपवीत संस्कार संपन्न हो जाता था | अथर्ववेद में कहा गया है कि –

"ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाहनत"|[1] (अथर्वेद, ११/५/१९)

अर्थात् देवों ने ब्रह्मचर्य तथा तपस्या के बल पर मृत्यु को परास्त किया और अमर हो गए | वस्तुतः वैदिक शिक्षा पद्धति में सच्चरित्र और सुसंस्कृत शिक्षार्थी "ब्रह्चारी" के रूप में गुरुकुल में प्रविष्ट होते थे| इसके साथ ही आश्रम व्यवस्था के रूप में जहाँ पर बौद्धिकता का संवर्धन करने वाले वृक्षों की प्रचुरता कृत्रिम वाटिका के रूप में तुलसी आदि पौधों को आरोपित कर नदी अथवा सरोवर प्रान्त में जहाँ पर सांसारिक विषयों से ज्ञानेन्द्रियो को नियंत्रित किया जा सके और उन्हें वैदिक ज्ञान की दिशा में प्रवृत करना सुगम होता है | ऐसे परिवेश में वैदिक साहित्य में अनुशीलन तथा क्रियात्मक अनुभव किया जाता था | उस समय ऐसे विद्वान मुनि - मनीषियों के वैदिक चिंतन मनन का उनकी वाणी पर विशेष मुखरता के साथ प्रभावोत्पादकता दृष्टिगत होती थी | नित्य यज्ञ के विधि विधान को आश्रम में निवास करने वाले समस्त जन समुदाय को सम्मिलित होकर सहयोग करना अपेक्षित था | जिसके फल स्वरूप समस्त समाज में सुख समृद्धि के साथ – साथ शांति व आत्मनिर्भरता सामान्यतः दृष्टिगोचर होती थी |

कालांतर के आहार – विहार के व्यतिक्रम तथा संस्कारो की शिथिलता के कारण बुद्धि – विवेक तथा मेधा शक्ति का ह्रास होने लगा | ऐसी स्थिति में वैदिक ज्ञान की निष्ठावान् परम्परा प्रभावित हुई और स्मरण शक्ति की शिथिलता के फलस्वरूप विषयानुसार वैदिक ज्ञान को पृथक – पृथक संहिता ग्रंथो के रूप में व्यवस्थित किया गया है| पठन – पाठन की सुविधा हेतु वेदांग साहित्य का प्रादुर्भाव हुआ और चारो वेदों के स्थान में किसी एक वेद की विशेषज्ञतायुक्त विद्वान् दृष्टिगत हुए |

सम्प्रति जिसका ज्वलंत प्रमाण सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी में संहिता ग्रंथो के साथ वेदांग साहित्य की पृथक् – पृथक् आचार्य कक्षा पर्यन्त शिक्षण व्यवस्था है | यहाँ तक भारतीय दर्शनों के अध्ययन हेतु षड्दर्शनों के पृथक-पृथक आचार्य और तुलनात्मक दर्शन जिसमें पाश्चात् दर्शन को भी संम्मिलित किया गया है | आचार्य कक्षा में अध्ययन की परंपरा का निर्वाह होरहा है | विश्वविद्यालयीय शिक्षा के अंतर्गत वैदिक ज्ञान के रूप में सीमित व अव्यवस्थित पाठ्यक्रम औपचारिकता मात्र रह गयी है | ऐसी स्थिति में वैदिक साहित्य के संरक्षण की परिकल्पना सूर्य को दीपक दिखाने की भांति ही मानना चाहिए |

किसी समय भारत वर्ष विश्व गुरु माना गया –

"एतद् देशप्रसूतस्यसकासादग्रजन्मनः"|

"स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन पृथ्वीव्याम सर्व मानवः" [2] (मनुस्मृति)

प्रकृति के स्वाभाविक व सुरम्य वातावरण के मध्य कायिक, वाचिक व मानसिक मनुष्य की स्वस्थता के साथ उसकी मेधा व बौद्धिक संवर्धन पुरातनकाल की अपेक्षा सम्प्रति प्रदूषणजन्य कृत्रिम वातावरण और आहार विहार के तामसी व राजसी अनुसरण ने मानसिक व बौद्धिक चिंतन को बौद्धिक विकास होते हुए भी आज सृजनात्मक अवधारणा के स्थान पर विध्वंशात्मक दिशा की ओर प्रबृत कर दिया है | कहने का आशय यह है कि हमारे शैक्षिक युवक प्रकृति विरुद्ध आहार विहार का अनुसरण करते हुए रात्रि कालीन बेला में अध्ययन में प्रवृत हो रहे हैं | और प्रायः सूर्योदय के सात्विक मांगलिक वातावरण के दर्शन काल में उनकी सुप्तावस्था रहती है | ऐसी स्थिति में उनके ज्ञान में किसी प्रकार की न्यूनता नहीं मानी जा सकती परन्तु स्वस्थ्य मानसिक चिंतन जो सात्विक मार्ग में प्रवृत हो ऐसा दृष्टिगत नहीं हो पाता |

आज वैश्विक युग में प्रायः समस्त देश आतंकवाद से अल्पाधिक्य मात्रा में संक्रमित है |यह कहना कथमपि अनुचित न होगा कि आतंकवादी अशिक्षित व् मूर्ख होते है| अपितु उन्हें नवीनतम ज्ञान विज्ञान व समाज के ऐतिहासिक, भौगोलिक तथा सामाजिक स्वरूप का सूक्ष्मतम ज्ञान होता है| ऐसे में वैदिक ज्ञान के संरक्षण की कल्पना भी करना अत्यंत दुष्कर विचार प्रतीत होता है | अस्तु हम सभी को अपने वैदिक वाड्न्मय को पूर्ववत् जन – जन में लाभोंमुखी बनाने के लिए तथा उनके संरक्षण के निमित्त अधोलिखित विन्दुओं के परिप्रेक्ष्य में चिंतन व व्यावहारिक दृष्टि से अनुकरण नितांत अपेक्षित है -

पारिवारिक संस्कार –

“जन्मना जायते शूद्रः , संस्कारात् द्विज उच्यते” [3] (मनुस्मृति)

मनुस्मृति के इस महा वाक्य के सम्बन्ध में यदि गंभीरता से विचार किया जाये तो संस्कार का मानव जीवन में विशेष महत्व स्पष्ट होता है | वास्तव में वैदिक शिक्षा प्रणाली संस्कार पद्धति पर ही आधृत है | क्योंकि कि मानव को संस्कृत करना ही वैदिक शिक्षा का सर्वोच्च लक्ष्य रहा है | ज्ञान के उपार्जन और बुद्धि के परिमार्जन में ही नहीं शिक्षार्थियों के नैतिक चरित्र और संस्कृत व्यक्तित्व के निर्माण में भी संस्कारो का बड़ा महत्व है | जैसे मिट्टी के नए कच्चे बर्तन पर खीची गयी लकीर हमेशा के लिए अंकित हो जाती है, वैसे ही कोमलमति शिशुओं के अबोध अंतःकरण पर पड़े हुए संस्कार अमिट होते हैं –

“यन्नवे भाजने लग्नः संस्कारो जान्यथाभवेत्” [4] (द्वितोपदेश प्रस्ताविका श्लोक 8)

वैदिक संस्कृत में सोलह संस्कारों की परम्परा मानव प्रकृति के सांस्कृतिक उन्नयन की ही प्रक्रिया थी | षोडश संस्कार प्रायः सर्वसम्मत संस्वीकृत किये गए हैं जिसमे गर्भाधान संस्कार में ही जीव का वास्तविक निर्माण हो जाता है सुश्रुत सहिंता के शरीर स्थान में यह स्पष्ट रूप से घोषित किया गया है कि शास्त्रोक्त रीति से उत्पन्न हुआ संतान रूपवान् , गुणवान्, व् पूर्णायु वाला होता है | साथ ही वह माता – पिता, गुरु, समाज, व् राष्ट्र ऋण से उन्मुक्त करने वाला माना गया है |

"एवं जातः रूपवंतः गुणवन्तः चिरायुषः" [5] (शारीरस्थान,सुश्रुतसंहिता)

जन्मोपरांत जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, कर्णछेदन तथा मुंडन संस्कार के पश्चात् यज्ञोपवीत संस्कार की सम्पन्नता और ब्रह्मचारी का गुरुकुल में अध्ययन हेतु प्रवेश पुरातन पद्धति के आधार पर यदि व्यवस्था बनाई जाये तो ऐसे छात्रो के मौलिक चिंतन का स्वस्थ विकास संभव है | अथर्ववेद में कहा गया है कि प्रजापति या राजा को भी ब्रह्मचारी होना चाहिए , ब्रह्मचर्य से युक्त राजा विशेष रूप से राष्ट्र की रक्षा करता है –

"ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति" [6] (अथर्ववेद ११/५/१७)

प्राकृतिक संरक्षण – सम्पूर्ण भूमंडल पर लगभग ७१ प्रतिशत समुद्री भाग तथा 29 प्रतिशत भूपटल की स्थिति है | भूपटल में भी स्थान- स्थान पर जीवन यापन के लिए नदियों के साथ विभिन्न प्रकार के वृक्षों के समूह अर्थात वनप्रांत विद्यमान है | पर्वतीय श्रृंखला और वहाँ की प्राकृतिक छटा सर्वदा से वैदिक चिंतन के निमित्त श्रेयष्कर है| आज नदियों में बाँध बनाकर उसके स्वाभाविक प्रवाह को अवरुद्ध किया जा रहा है | जिससे आवश्यकतानुसार जल की आपूर्ति में बाधा उपस्थित हो रही है पर्वतीय क्षेत्रो में पर्यटन केंद्र बनते जा रहे है जिससे उनकी प्रकृतिस्थ स्वाभाविकता निश्चित रूप से प्रभावित हो गयी | इसके साथ ही जल प्रदूषण, वायुप्रदूषण, ध्वनिप्रदूषण व् पर्यावरण प्रदूषण के साथ वाक्प्रदूषण अत्यंत तीव्रता के साथ संक्रामक रोग की भाँति विकसित हो रहा है |वृक्षारोपण के नाम पर मात्र औपचरिकता हो रही है | ऐसी स्थिति में ऋतुओ की स्वाभाविकता पर भी कुठाराघात स्वभावसिद्ध है| आवश्यकता इस बात की है कि प्राकृतिक संरक्षण के साथ वृक्षारोपण व उनकी शिशुवत पालन पोषण की नियमित व्यवस्था होनी चाहिए | वृक्षों और वनस्पतियों के प्रति संवेदना और संरक्षण की भावना तथा द्युलोक को

पिता और पृथ्वी को माता मानने वाले वैदिक घोष पर्यावरण चेतना को एक मानवीय तथा भावनात्मक भित्ति प्रदान करते हैं |

"द्यौर्मे पिता जनितानाभिरत्र बंधुर्मे माता महीयम" [7] (ऋग्वेद 1/164/33)
"माताभूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्याः" [8] (अथर्ववेद, 12/1/12)

उपयोगी वृक्षों को सामूहिक व स्वतंत्र रूप से आरोपित किया जाए जिससे स्वस्थ वातावरण की चतुर्दिक स्थापना संभव हो सके |

यज्ञ संपादन –

यज्ञ वैदिक शिक्षा प्रणाली का केंद्र था | इसके माध्यम से शिक्षार्थियों को आत्म समर्पण एवं त्याग की शिक्षा दी जाती थी तथा धर्म के विविध प्रकारों, पञ्चमहायज्ञों से मनुष्यों को अपने सामाजिक दायित्वों के प्रति सजग बनाया जाता था | यज्ञ व्यक्ति को क्रमश: धर्म के सोपानों पर अग्रसर करते थे तथा धर्म के द्वारा वह ब्रह्म साक्षात्कार तक पहुँच सकता था | इस प्रकार यज्ञ के द्वारा शिक्षार्थी अपने ह्रदय में ज्ञान की अग्नि प्रज्वलित करने की प्रेरणा लेता था | यज्ञ की यह स्थूल अग्नि मानो उस विराट ब्रह्मांडीय अग्नि की प्रतीक है जिसका वर्णन ऋग्वेद पुरुषसूक्त में किया गया है | वैदिक विद्वानों का विश्वास था कि यज्ञ करने वाला सदा उन्नत रहता है –

"उर्ध्व ऊषुणो अध्वरस्य होतरग्नेतिष्ठ देवताता यजीयान" [9] (ऋग्वेद ४/६/१)

वर्तमान में इस याज्ञिक प्रक्रिया के विधिपूर्वक संपादन से समस्त वायुमंडल में व्याप्त प्रदूषण का परिशोधन करके तथा उसमे निहित धार्मिक भावना के द्वारा पूर्वसंचित नैसर्गिक गुणों के परिशीलन की शिक्षा प्रदान करता है | यही कारण है कि यज्ञ वैदिक शिक्षा प्रणाली का प्रमुख साधन रहा है |

वैदिक ज्ञान के प्रति अभिरुचि उत्पन्न करना –

"यदिहास्ति तद्वान्यत्र यन्नोहास्तिन तद्क्वाचित् |"

इस महावाक्य द्वारा यह सिद्ध होता है कि वैदिक वाङ्न्मय में जो कुछ है वह अत्यधिक समृद्धिशाली साहित्य से परिपूर्ण है उसकी प्रत्येक ऋचा का प्रत्येक वर्ण मानव जीवन में अमृत्व का दिग्दर्शन कराता है | आज मानव समाज में उसके प्रचार प्रसार व संरक्षण के साथ सूक्ष्म चिंतन की नितांत अपेक्षा है जो वैदिक संहिताओ के संरक्षण द्वारा संभव है | वेद में व्यक्ति को समाज के योग्य बनाना ही शिक्षा का केंद्र माना गया,अतः सर्वत्र – **" कृण्वन्तो विश्वमार्यम"** [10] (ऋग्वेद 3/63/5)

तथा **" पुमान् पुमांसं परिपातु विश्वतः"** [11] (यजुर्वेद 29/51)

जैसे आदर्श सामने रखे गए| इससे अधिक सार्वभौम, सार्वकालिक और मानवतावादी शिक्षाप्रद सन्देश और कही मिलने दुर्लभ है | मनुष्यमात्र के प्रति सौहार्द और सद्भाव सिखाना वैदिक ज्ञान का प्रधान लक्ष्य रहा है |

" तत्कृण्मोब्रह्मा वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्य:" [12] (अथर्ववेद 3/30/4)

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि आज की उपयोगितावादी शिक्षा को जीवन के समग्र विकास की दृष्टि से आवश्यक है कि उसमे जीवन मूल्यों की शिक्षा, मानवीय संबंधो की शिक्षा तथा सर्वोपरि सिद्धांत और व्यवहार के समन्वय की शिक्षा भी समाविष्ट की जाये | सम्प्रति पाश्चात्य संस्कृति के चाक-चक्य से चमत्कृत होकर हम वैदिक वाङ्न्मय को संरक्षण प्रदान करने के निमित्त प्राचीन गुरुकुल पद्धति के आश्रम व्यवस्था की पवित्रता, सात्विकता, नैतिकता, तथा चारित्रिक उच्चता को अधिगत करते हुए सनातन परम्परा की ओर उन्मुख होकर ही वास्तव में वैदिक वाङ्न्मय का संरक्षण करने में पूर्णतः सफलता प्राप्त कर सकते हैं |

"किमधिकं विज्ञेषु" ||